एक नई समस्या - पर्यावरण शरणार्थी

प्रमोद भार्गव

जलवायु परिवर्तन के चलते एक नई वैश्विक समस्या आकार ले रही है - पर्यावरण शरणार्थी। बीते कुछ माहों में आई प्राकृतिक आपदाओं और नए साल की शुरुआत में ब्राज़ील, ऑस्ट्रेलिया, सिडनी, फिलीपीन्स में बाढ़, भूस्खलन और कोहरे का प्रकोप प्रकृति की स्वाभाविक प्रक्रिया है अथवा मानवीय गतिविधियों का दुष्परिणाम? ये आपदाएं यह संकेत ज़रूर दे रही हैं कि जलवायु परिवर्तन का दायरा लगातार बढ़ रहा है और इसकी चपेट में दुनिया की ज़्यादा से ज़्यादा आबादी आती जा रही है।

जलवायु विशेषज्ञों का मानना है कि इस विराट व भयानक संकट के चलते युरोप, एशिया और अफ्रीका का एक बड़ा भूभाग इन्सानों के लिए रहने लायक ही नहीं रह जाएगा। तब लोगों को अपने मूल निवास स्थलों से जिस पैमाने पर विस्थापन व पलायन करना होगा, वह मानव इतिहास में अभूतपूर्व होगा।

इस व्यापक परिवर्तन के चलते खाद्यान्न उत्पादन में भारी कमी आएगी। अकेले एशिया में कृषि को बहाल करने के लिए हर साल करीब पांच अरब डॉलर का अतिरिक्त खर्च उठाना होगा। बावजूद इसके दुनिया के करोड़ों लोगों को भूख का अभिशाप झेलना होगा। वर्तमान में अकाल के चलते हैती और सूडान में कमोबेश ऐसे ही हालात हैं।

जहां ऑस्ट्रेलिया, फिलीपीन्स और श्रीलंका में बाढ़ ने कहर ढाया, वहीं ब्राज़ील में भारी बारिश और भूस्खलन ने तबाही मचाई। अमेरिका में बर्फबारी का यह आलम था कि बर्फ की दस-दस फीट ऊंची परत बिछ गई। मेक्सिको में कोहरे का प्रकोप है तो कैंटानिया में ज्वालामुखी से उठी 100 मीटर ऊंची लपटें तबाही मचा रही है।

प्रकृति के अंधाधुंध दोहन के दुष्परिणाम स्वरूप श्रीलंका में 3,25,000 लोग बेघर हुए। करीब 50 लोग काल के गाल में समा गए। इस तांडव की भयावहता का अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि देश की थल, जल और वायु सेना के 28,000 जवान राहत कार्य में जुटे थे। ऑस्ट्रेलिया में हालात और भी गंभीर रूप में सामने आए। करीब 40 लाख लोग बेघर हुए। यहां के ब्रिस्बेन शहर की ऐसी कोई बस्ती बचाव दलों को देखने में नहीं आई जो जलमग्न न हो। पानी से घिरे लोगों को हेलिकॉप्टर से निकालने के काम में सेना लगी। सौ से ज़्यादा लोग जान गंवा चुके हैं। फिलीपीन्स में आई ज़बर्दस्त बाढ़ ने लहलहाती फसलों को बरबाद कर दिया। नगर के मध्य और दक्षिणी हिस्से में पूरा बुनियादी ढांचा ध्वस्त हो गया। भूस्खलन के कारण करीब 4 लाख लोगों को विस्थापित होना पड़ा है। इस कुदरती तबाही का शुरुआती आकलन 23 लाख डॉलर है।

ब्राज़ील को बाढ़, भूस्खलन और शहरों में मिट्टी धंसने के हालातों का एक साथ सामना करना पड़ा है। यहां मिट्टी धंसने और पहाड़ियों से कीचड़ युक्त पानी के प्रवाह ने 600 से ज़्यादा लोगों की जान ली। ब्राज़ील में प्रकृति के प्रकोप का कहर रियो द जेनेरो नगर में बरपा। रियो वही नगर है जिसमें जलवायु परिवर्तन के मद्देनज़र 1994 में पृथ्वी बचाने के लिए अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित हुआ था। लेकिन अपने-अपने औद्योगिक हित ध्यान में रखते हुए कोई भी विकसित देश कार्बन कटौती के लिए तैयार नहीं हुआ। इस वजह से कार्बन उत्सर्जन में कमी आने की बजाय वृद्धि हुई। नतीजा अब हमारे सामने है।

मेक्सिको के सेलटिलो शहर में कोहरा इतना घना गहराया कि सड़कों पर एक हज़ार से भी ज़्यादा वाहन परस्पर टकरा गए। इस भीषणतम सड़क हादसे में करीब दो दर्जन लोग मारे गए और सैकड़ों घायल हुए। कैंटानिया ज्वालामुखी की सौ मीटर ऊंची लपट ने नगर में राख की परत बिछा दी और हवा में घुली राख ने लोगों का जीना दुश्वार कर दिया। इससे पहले अप्रैल 2010 में उत्तरी अटलांटिक समुद्र के पास स्थित युरोप के छोटे से देश

आइसलैंड में इतना भंयकर ज्वलामुखी फटा था कि युरोप में 17 हज़ार उड़ानों को रद्द करना पड़ा था। आइसलैंड से उठे इस धुंए ने इंग्लैंड, नेदरलैंड और जर्मनी को अपने घेरे में ले लिया था। वैज्ञानिकों ने चेतावनी दी थी कि ज्वालामुखी से फूटा लावा बर्फीली चट्टानों को पिघला देगा। लावा और बर्फीला पानी मिलकर एक ऐसी राख उत्पन्न करेंगे जिससे हवाई जहाज़ों के चलते इंजन बंद हो जाएंगे। राख जिस इंसान के फेंफड़ों में घुस जाएगी उसकी सांस वहीं थम जाएगी। इसलिए युरोपीय देश के लोगों के बाहर निकलने पर प्रतिबंध लगा दिया गया था।

युरोप में चल रही ज़बरदस्त बर्फबारी के चलते वहां असामान्य ढंग से शून्य से 15 डिग्री नीचे खिसका तापमान और हिमालयी व अन्य पर्वतीय क्षेत्रों में 1.4 डिग्री सेल्सियस तक चढ़ा ताप दर्शा रहे हैं कि जलवायु परिवर्तन निश्चित है। इसके साथ भौगोलिक बदलाव की पदचाप भी सुनाई दे रही है। ये बदलाव होते हैं तो करोड़ों लोग बेघर होंगे। इन्हें हम पर्यावरण शरणार्थी कह सकते हैं। दुनिया के सामने इनके पुनर्वास की चिंता तो होगी ही, खाद्य और स्वास्थ्य सुरक्षा भी अहम होगी।

विशेषज्ञों का मानना है कि 2050 तक दुनिया भर में 25 करोड़ लोगों को अपने मूल निवास स्थलों से पलायन को मजबूर होना पड़ सकता है। जलवायु परिवर्तन की मार मालदीव और प्रशांत महासागर क्षेत्र के कई द्वीपों के वजूद को पूरी तरह लील लेगी। इन्हीं आशंकाओं के चलते मालदीव की सरकार ने पर्यावरण संरक्षण की दिशा में महत्त्वपूर्ण पहल करते हुए चर्चा के लिए समुद्र की गहराई में बैठकर औद्योगिक देशों का ध्यान अपनी ओर खींचा था ताकि ये देश कार्बन उत्सर्जन में ज़रूरी कटौती कर दुनिया को बचाने के लिए आगे आएं।

बांग्लादेश भी बर्बादी की कगार पर है। चूंकि यहां आबादी का घनत्व बहुत ज़्यादा है, इसलिए बांग्लादेश के लोग बड़ी संख्या में इस परिवर्तन की चपेट में आएंगे। यहां तबाही का तांडव इतना भयानक होगा कि सामना करना नामुमकिन होगा। भारत की सीमा से लगा बांग्लादेश तीन नदियों के डेल्टा में आबाद है। इसके दुर्भाग्य की वजह भी यही है। इस देश के ज़्यादातर भूखण्ड समुद्र तल से बमुश्किल 20 फीट की ऊंचाई पर आबाद हैं। इसलिए धरती के बढ़ते तापमान के कारण जलस्तर ऊपर उठेगा तो सबसे ज़्यादा जलमग्न भूमि बांग्लादेश की होगी। जलस्तर बढ़ने से कृषि का रकबा घटेगा। नतीजतन 2050 तक बांग्लादेश की धान की पैदावार में 10 प्रतिशत और गेहूं की पैदावार में 30 प्रतिशत तक की कमी आएगी। इक्कीसवीं सदी के अंत तक बांग्लादेश का एक चौथाई हिस्सा पानी में डूब जाएगा। वैसे तो मोज़ांबिक से तवालू और मिस्र से वियतनाम के बीच कई देशों में जलवायु परिवर्तन के कारण पलायन होगा, लेकिन सबसे ज़्यादा पर्यावरण शरणार्थी बांग्लादेश के होंगे। अनुमान के मुताबिक इस देश से दो से तीन करोड़ लोगों को पलायन पर मजबूर होना पड़ेगा।

बांग्लादेश पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव का अध्ययन करने वाले जेम्स पेंडर का मानना है कि2080 तक बांग्लादेश के तटीय इलाकों में रहने वाले पांच से दस करोड़ लोगों को अपना मूल क्षेत्र छोड़ना पड़ सकता है। देश के तटीय इलाकों से ढाका आने वाले लोगों की तादाद लगातार बढ़ती जा रही है। अमेरिका की प्रसिद्ध विज्ञान पत्रिका साइंटिफिक अमेरिकन ने बांग्लादेश के पर्यावरण शरणार्थियों पर एक विशेष रपट में कहा है कि बूढ़ी गंगा किनारे बसे ढाका शहर में हर साल पांच लाख लोग आते हैं। इनमें से ज़्यादातर तटीय और ग्रामीण इलाकों से होते हैं। यह संख्या वाशिंग्टन डीसी के बराबर है।

अभी यह स्पष्ट नहीं हैं कि जलवायु परिवर्तन से हुए पर्यावरण बदलाव के कारण कितने लोग शहरों में आकर बसने को मजबूर हो रहे हैं। लेकिन यह तय है कि विकासशील देशों में गांवों से शहरों की ओर होने वाले पलायन में जलवायु परिवर्तन प्रमुख कारण होगा।

विस्थापन से जुड़े विशेषज्ञों का मानना है कि ढाका में मौसम में बदलाव के चलते विस्थापितों की संख्या लगातार बढ़ रही है। तटीय बाढ़ बार-बार आने लगी है। जमीन में खारापन बढ़ने से चावल की फसलें नष्ट हो रही हैं। यही नहीं, भयंकर तूफानों से गांव के गांव तबाह हो रहे हैं। ऐसा अनुमान लगाया जा रहा है कि बांग्लादेश की गिनती जल्दी

ही ऐसे देशों में होने लगेगी जहां दुनिया के किसी भी देश के मुकाबले ज़्यादा पर्यावरण शरणार्थी होंगे।

बांग्लादेश की सरकार ने इस समस्या को दुनिया के अंतर्राष्ट्रीय मंच कोपेनहेगन सम्मेलन में उठाया भी था। बांग्लादेश के प्रतिनिधि सुबेर हुसैन चौधरी का कहना था कि इस शिखर सम्मेलन में जलवायु परिवर्तन से होने वाले आंतरिक विस्थापन और पलायन पर भी गौर किया जाना चाहिए। इस संकट से तीन करोड़ लोगों के प्रभावित होने की आशंका जताई जा रही है। तय है ऐसे विकट हालात में घनी आबादी के घनत्व वाला बांग्लादेश इस संकट से अपने स्थानीय संसाधनों से नहीं निपट सकता। इसलिए समय रहते ऐसे तरीकों की तलाश ज़रूरी है, जिनके ज़रिए पर्यावरण शरणार्थियों को विश्व के अन्य खुले हिस्सों में बसाने के मुकम्मल इंतज़ाम हों। तत्काल तो पर्यावरण शरणार्थियों को मान्यता देकर उन्हें अंतर्राष्ट्रीय समस्याग्रस्त समूह का दर्ज़ा दिया जाना ज़रूरी है ताकि वैश्विक स्तर पर राहत पहुंचाने वाली संस्थाएं उनकी मदद के लिए तैयार रहें।

इस व्यापक बदलाव का असर कृषि पर दिखाई देगा। खाद्यान्न उत्पादन में भारी कमी आएगी। अंतर्राष्ट्रीय खाद्य नीति शोध संस्थान के मुताबिक अगर ऐसे ही हालात रहे तो एशिया में एक करोड़ दस लाख, अफ्रीका में एक करोड़ और बाकी दुनिया में चालीस लाख बच्चों को भूखा रहना होगा। कृषि वैज्ञानिक स्वामीनाथन का मानना है कि यदि धरती के तापमान में एक डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हो जाती है तो गेहूं का उत्पादन 70 लाख टन घट सकता है। बहरहाल दुनिया की आबादी इसी रफ्तार से बढ़ती रही और हम मौसम के बदलाव पर भी अंकुश न लगा पाए तो 2050 तक इस आबादी को खाद्यान्न उपलब्ध कराने के लिए तीन अरब हैक्टर अतिरिक्त ज़मीन की ज़रूरत होगी, जो दुनिया के विकासशील देशों के कुल रकबे के बराबर है।

संयुक्त राष्ट्र के एक आकलन के मुताबिक 2050 तक दुनिया की आबादी 9 अरब 20 करोड़ हो जाएगी। उभरते जलवायु संकट और बढ़ते पर्यावरण शरणार्थियों के चलते इतनी कृषि लायक भूमि उपलब्ध कराना असंभव होगा। लेकिन ये तो अनुमान हैं और इनके निराकरण उम्मीदों पर टिके हैं। ***(स्रोत फीचर्स)***